एक मनस्वी जीवन

लेखक :—

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

हृदय तन्त्री पर एक सम्मति

प्रिं० रामचन्द्र जी 'जावेद'

हृदय-तन्त्री: - "यह पुस्तक आर्य युवक समाज अबोहर के पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय प्रकाशन मन्दिर ने प्रकाशित की है। इसके लेखक हमारे प्रिय भाई प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु' दयानन्द कालेज अबोहर हैं। इसे परमात्मा की विशेष कृपा समझिए कि श्री 'जिज्ञासु' जी लेखक तथा वक्ता होने के साथ २ बड़े अच्छे कवि भी है। आपकी कविताओं का एक संग्रह पहिले इसी नाम से प्रकाशित हो चुका है। यह दूसरा खण्ड है। उनकी कविताओ में काव्य कला की पूर्णता के साथ आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के प्रति जो श्रद्धा व वास्तविकता टपकती है वह कहीं और नहीं। उनके अपने शब्दों में '**ऋषि मिशन के प्रति अपना हृदय समर्पित करके लिखता हूं**।' परन्तु मुझे हृदय और मस्तिष्क दोनों की साधना परम सीमा पर दिखाई देती है।

आर्यसमाज उनका सर्वस्व है। उनकी कविताओ में उनका आर्यसमाज प्रेम और ऋषि मिशन के प्रचार के लिए जोश एक एक पद और एक एक शब्द से टपकता है। यही कारण है कि उनकी कवितायें आर्य जगत में बहुत लोक प्रिय हो रही हैं। मुझे प्रसन्नता है कि उन्होंने समय पर ही अपनी रचनाओं का सङ्कलन आरम्भ कर दिया है।"
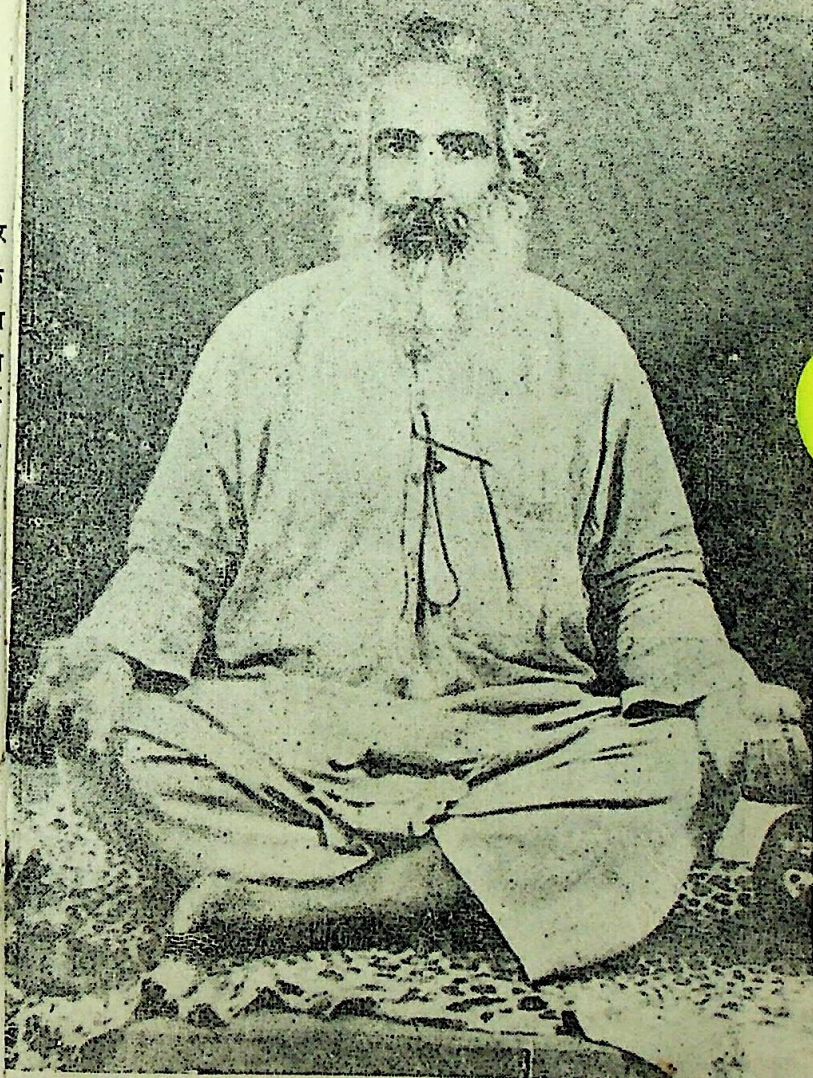
पूज्य आचार्य श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज, हैदराबाद सत्याग्रह के समय का एक अप्रकाशित चित्र

महाशय हंसराज आर्य
बरेटा

ला० देवीदयाल जी गुप्त
टोहाना

ओ३म्
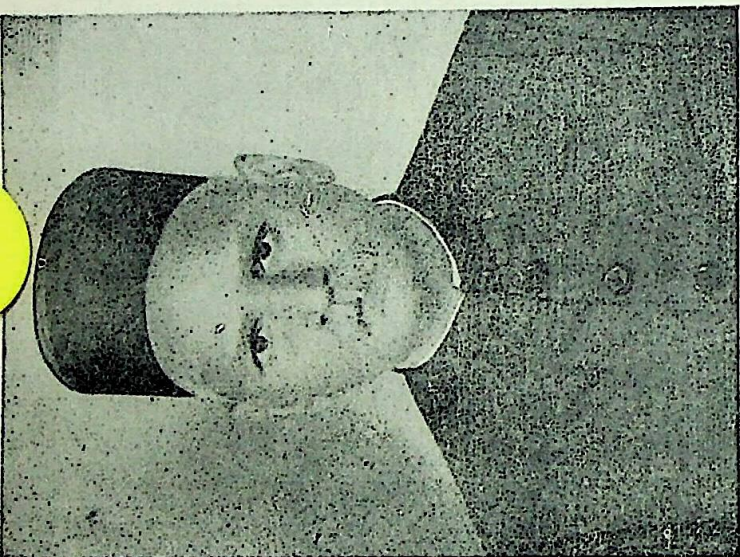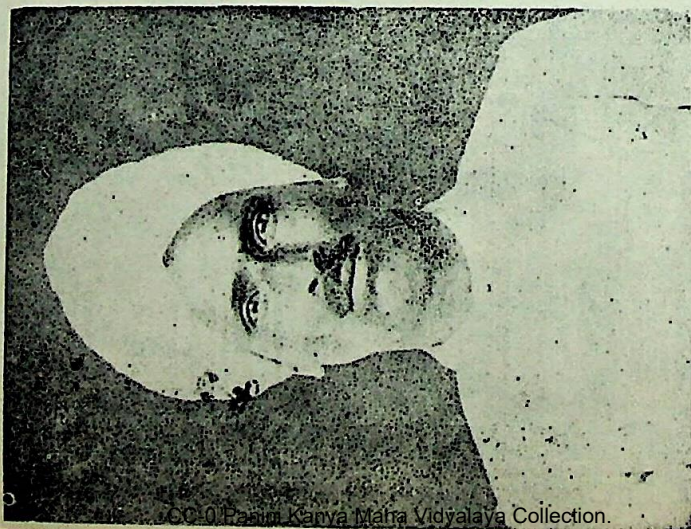
एक मनस्वी जीवन

श्रीयुत पं० मनसाराम जी 'वैदिक तोप'

लेखक :— प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

(प्रणेता :—वीर सन्यासी, महर्षि का ऐक्यवाद, मौलिक भेद, हृदय-तन्त्री प्रथम व द्वितीय खण्ड, प्रेरणा कलश, प्रेरणा कुटि, अतीत के झरोखे से, स्वाधीनता संग्राम व आर्यसमाज, मूल की भूल आदि आदि)

प्रकाशक :— आर्य युवक समाज अबोहर

प्राप्ति स्थान :— वैदिक साहित्य संस्थान, दयानन्द मठ
दीनानगर व रोहतक।

Rs 2-25
मूल्य ~~२ रु०~~

समर्पण

मैं

अपनी इस पुस्तक को
मनस्वी पं० मनसाराम जी 'वैदिक तोप'
के
मित्र, महर्षि दयानन्द के वीर सैनिक, समाज सेवी,
पुरुषार्थी व परमार्थी महाशय हंसराज जी बरेटा
तथा
पं० जी के सहयोगी, हितैषी प्रसिद्ध आर्य दानी
लाला देवी दयाल जी टोहाना
को
पावन स्मृति में समर्पित
करता हूँ
इन दोनों आर्य पुरुषों को पं० जी के
ग्रंथों के प्रकाशन का मुख्य श्रेय
प्राप्त रहेगा।

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

भूमिका

महर्षि दयानन्द से पूर्व भी भारत में कई सुधारक व विचारक हुए। अनार्ष ग्रंथों का प्रचार जब बढ़ा तब भी वेद थे। कोई युग ऐसा नहीं रहा जब वेद न थे। अनार्ष काल में कई विचारकों ने वेद-प्रचार किया परन्तु वे वेद को जन साधारण तक न ले जा सके। उन्होंने ऐसा यत्न ही न किया। यह भयंकर भूल थी। इस पाप का फल हमारे सामने है।

ऋषि दयानन्द ने वेद के सार्वभौमिक सिद्धान्तों के प्रचार में अपना सर्वस्व होम दिया। वह विश्व के पहिले महामानव थे जिन्होंने युगों के पश्चात् यह घोषणा की कि धर्म व विज्ञान का विरोध नहीं। सारे विश्व में विज्ञान के अनुसंधान व प्रसार का स्वागत करने वाले वह प्रथम महात्मा थे। नगर २ में शास्त्रार्थ करके अंध विश्वासी मतवादियों को आपने पिछाड़ा।

महर्षि के पश्चात् भी उनकी शिष्य परम्परा में शास्त्रार्थ कला के कई कलाकार कार्य क्षेत्र में आए। पं० लेखराम से लेकर श्री पं० शान्तिप्रकाश जी तक यह गुरु शिष्य परम्परा चली आ रही है और चलती रहेगी। परम्परा की इसी कडी में अद्वितीय शास्त्रार्थी श्री पं० मनसाराम जी 'वैदिक तोप' का अपना ही स्थान है। वह लेखक, कवि, वक्ता, शास्त्रार्थी तो थे ही, वह भारतीय स्वाधीनता संग्राम के भी योद्धा थे। वह कई बार जेल गये। निधन से पूर्व भी जेल जाने का उनका निश्चय था। तब व्यक्तिगत

सत्याग्रह चल रहा था।

कोई छः वर्ष पूर्व ऋषि मिशन के लिए ऐतिहासिक कार्य करने वाले इस आग्नेय पुरुष (fiery man) का जीवन चरित्र लिखने की धुन मेरे मन में समाई। खोज आरम्भ की। 'वैदिक धर्म' साप्ताहिक में पं० जी पर लेखमाला दी। मेरा अनुसंधान चलता रहा। पर्याप्त समय, धन व शक्ति लगा कर मेरी मनोकामना पूर्ण हुई। कहां २ जाना पड़ा? क्या क्या कठिनाइयां आईं? अब इसकी चर्चा करने से कोई लाभ नहीं।

पं० जी के जीवन की घटनाओं की खोज में दिवंगत महाशय हंसराज आर्य, महाशय मोहनलाल जी गुप्त जाखल, मास्टर हरिचन्द जाखल, महाशय ऋषिराम (रामां) गोनियाना मन्डी, महाशय कुन्दनलाल गुप्त बढलाडा आदि ने जो सहयोग दिया उसके लिए मैं उनका ऋणी हूं।

इससे पूर्व किसी शास्त्रार्थी का जीवन चरित्र प्रकाशित नहीं हुआ। वीरगति पाने वाले पं० लेखराम, स्वा० श्रद्धानन्द व भाई श्यामलाल की बात अलग है। पाठक इसके प्रसार में सहयोग करेंगे तो अगला संस्करण इससे भी बड़ा व बढ़िया होगा। यदि यह संस्करण खप गया तो मुझे बड़ा सन्तोष होगा। इससे प्राप्त लाभ मैंने मलयालम सत्यार्थप्रकाश आदि के लिए देने का सङ्कल्प किया है।

पं० लेखराम बलिदान हीरक जयन्ती के उपलक्ष में प्रकाशित

विनीत
राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
६-४-१९७२ ई०

ओ३म्

जीवन का उषा काल

श्रीयुत पं० मनसा राम जी 'वैदिक तोप' का जन्म १८९० ई० में ग्राम हड्डां वाला नंगल (जाखल के निकट) ज़िला हिसार हरियाणा में हुआ। उनके पूज्य पिता श्री लाला शंकरदास जी एक सुखी गृहस्थी थे। अन्न धन से सम्पन्न थे। व्यापार अच्छा था। वह बड़े कट्टर पौराणिक थे। अग्रवाल परिवारों में तो पौराणिकता के घटाटोप अंधेरे के कारण आज भी सामाजिक कुरीतियों का सर्वप्रथम प्रहार इन्हीं पर होता है। लाला शंकरदास जी ने घर पर ही एक छोटा सा मन्दिर बना रखा था। 'देवी रानी' की पूजा नित्य प्रति किया करते थे। प्रतिदिन देवी जी को एक टका (दो पैसे) भेंट चढ़ाया करते थे। उन दिनों एक टका का बड़ा भारी मूल्य था। लाला जी ने देवी जी का एक कोष भी बना रखा था। जब बालक मनसाराम कुछ बड़ा हुआ तो अपने पिता की अनुपस्थिति में देवी की जोत (ज्योति) जगाने व टका चढ़ाने का कर्त्तव्य पूज्य पिता जी की भांति पूर्ण अंध भक्ति से निभाया करता था।

प्राथमिक शिक्षा के लिए मनसाराम जी को ग्राम बामन वाला की प्राथमिक पाठशाला में प्रविष्ट करवाया गया। मुंशी शमस-उद्दीन उनको पढ़ाया करते थे। मनसाराम श्रद्धापूर्वक गुरू की सेवा किया करते थे। मुंशी शमस-उद्दीन को टोहाना जिला हिसार में स्थानान्तरित कर दिया गया। प्राईमरी की परीक्षा उत्तीर्ण करके मनसाराम भी टोहाना के मिडल स्कूल में प्रविष्ट हो गये। मुंशी शमस-उद्दीन अपने इस पुराने मेधावी शिष्य को मुसलमान बनाना चाहते थे।

मनसाराम कभी २ मुंशी जी की रोटी भी बना दिया करता था। मुंशी जी कभी कभी मनसाराम के मुख पर कुल्लियां भी मार दिया करते थे। अग्रवालों में अंध श्रद्धा के संस्कार उस युग में तो और भी दृढ़ थे अतः मनसाराम ने मुंशी शमस-द्दीन के इस मूर्खतापूण निकृष्ट कर्म पर कभी भी रोष प्रकट न किया। दूसरे हिन्दु छात्र मुंशी जी की इस करतूत से बड़े अप्रसन्न थे। जाखल मण्डी के व्योवृद्ध कांग्रेसी व आर्यसमाजी नेता महाशय मोहनलाल जी गुप्त मनसाराम जी के सहपाठी थे। मोहनलाल जी अब तक भी बालकाल की यह घटना नहीं भूल सके। बालक मोहनलाल को तो विशेष रूप से मुंशी जी के इस कुकृत्य से घृणा थी।

बालक मोहनलाल ने अनेक बार अपने सहपाठी व अग्रवाल भाई को समझाया कि मुसलमान से भले ही मेल मिलाप रखो परन्तु ऐसे सम्बंध न रखो कि धर्मभ्रष्ट ही हो जाओ। मनसाराम पर किसी के उपदेश का तनिक भी प्रभाव न हुआ।

१६०७ ई० में मनसाराम जी आठवीं में प्रविष्ट हुए। उन्हीं दिनों लाला शंकरदास जी की मृत्यु हो गई। पं० जी को स्कूल छोड़कर घर सम्भालना पड़ा। वह घर पर ही मिडल परीक्षा की प्राईवेट तैयारी करने लगे। ला० शंकरदास जी के घर पर एक पटवारी श्री रामप्रसाद जी रहा करते थे। श्री रामप्रसाद बड़े सदाचारी, मधुर भाषी, बुद्धिमान व प्रभावशाली व्यक्ति थे। वह बड़े कट्टर आर्यसमाजी थे। उनमें वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार की बड़ी लगन थी। वह ला० शंकरदास जी को वैदिक सिद्धान्त समझाते रहते। वैदिक मन्तव्यों को ठीक मानकर भी ला० शंकरदास मूर्त्ति-पूजा व अन्य पाखण्डों से छुटकारा न पा सके।

जब मनसाराम जी घर पर रहने लगे तो महाशय रामप्रसाद पटवारी उनको अपने बच्चों के समान स्नेह करते और उनकी सब प्रकार

की सहायता भी किया करते थे। मनसाराम जी को यदा कदा और सदा ही वैदिक धर्म के तत्त्वज्ञान का परिचय करवाते रहते थे। बाल्काल से ही मनसाराम जी बड़े तार्किक और कुशाग्र बुद्धि बालक थे। यदि युक्ति से कोई बात समझाए तो झट स्वीकार कर लेते थे। न केवल सत्य को स्वीकार ही कर लेते अपितु उसकी जांच पड़ताल में भी लग जाते। महाशय राम प्रसाद ने थोड़े ही समय में उनको अपने विचारों के रंग में रंग दिया।

पं० मनसाराम जी जीवन भर अपने आपको महाशय राम प्रसाद जी का ऋणी समझते रहे। नित्य ईश्वर के नित्य ज्ञान वेद की अक्षय सम्पदा के ऋण से वह अपने आपको मुक्त भी कैसे समझ सकते थे? मनसाराम जी की अलौकिक प्रतिभा ने जब पौराणिक जगत में खलबली मचा रखी थी। जब मनसाराम जी की असाधारण प्रत्युत्पन्नमति के कारण वह 'वैदिक तोप' के नाम नामी से विख्यात हो चुके थे। जब वह आर्य जगत के पूज्य विद्वानों को अग्रिम पंक्ति में स्थान पा चुके थे। कीर्ति के उस उच्च शिखिर पर पहुंचकर भी वह कितने विनम्र थे और महाशय राम प्रसाद जी के प्रति उनके पवित्र हृदय में कितनी श्रद्धा थी यह पं० जी के इन शब्दों से ही हम भली भांति जान सकते हैं।

पं० जी ने अपना १२२४ पृष्ठों का अपने विषय का बेजोड़ ग्रंथ 'पौराणिक पोप पर वैदिक तोप' श्री महाशय रामप्रसाद जी को ही समर्पित किया था। समर्पण के शब्दों में महाशय जी को पूज्यपाद महाशय रामप्रसाद जी आर्य लिखा है। उनके प्रति लिखा है :—

"जिनकी परम प्रेरणा से उत्साहित होकर मैंने देश धर्म और जाति की सेवा के व्रत को धारण किया और इस व्रत की पूर्ति के लिए बड़े परिश्रम के साथ परम

पवित्र देव वाणी संस्कृत का स्वाध्याय करके अपने जीवन को वैदिक धर्म के प्रचार में अर्पण किया।"

यदि मनसाराम जी ने वेद-उजाला पाकर व वेद ज्ञान का प्रसार करके जीवन को सफल बना लिया तो निश्चय ही परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद को मनसाराम सरीखा नर रत्न देकर रामप्रसाद जी ने भी अपना जीवन सफल व सार्थक बना लिया। अद्वितीय शास्त्रार्थी पं० मनसाराम जी के उपरोक्त (समर्पण उद्‌गार रूपी उपहार पाकर रामप्रसाद जी ने अपने को क्यों न धन्य धन्य समझा होगा। समर्पण के शब्दों में ओतप्रोत पं० जी की नम्रता को देखकर मुझे विश्व के महान नीतिज्ञ महाराज कौटिल्य के ये शब्द स्मरण हो आते हैं :—

विद्या ददाति विनयम्। (अर्थ शास्त्र)
अर्थात् विद्या से विनय प्राप्त होती है।

इतिहास के पृष्ठ इस बात का क्या निर्णय दें कि श्री रामप्रसाद जी पं० मनसाराम को पाकर धन्य हुए अथवा मनसाराम जी उनका सत्संग करके धन्य धन्य हुए ?

टोहाना का शास्त्रार्थ

मनसाराम जी परीक्षा की तैयारी के लिए यदा कदा टोहाना जाते रहते थे। वहाँ वह स्कूल के अध्यापकों से सहायता लेते रहते थे। टोहाना उन दिनों आर्य समाज की गतिविधियों का वड़ा विख्यात केन्द्र था। १९०४ ई० में टोहाना आर्यसमाज की स्थापना हुई। ला० देवीदयाल के एक ताऊ श्री कालूराम जी समाज के प्रथम प्रधान बने। श्री बाबू बृजलाल जी के पूज्य पिता श्री ला० देवी दयाल जी गुप्त व उनके सहयोगियों में वैदिक धर्म प्रचार की अथाह लगन के कारण टोहाना में आर्यसमाज के उत्सव व शास्त्रार्थ होते ही रहते थे। १९०८ ई० में टोहाना में पौराणिकों व आर्यों के मध्य एक वड़ा भारी शास्त्रार्थ हुआ। आर्यसमाज की ओर से दयानन्द कालेज लाहौर के प्राध्यापक राजाराम जी ने वैदिक पक्ष रखा। पौराणिकों की ओर से श्री पं० लक्ष्मी नारायण जी ने भाग लिया। श्री उदमी राम जी पटवारी शास्त्रार्थ के प्रधान थे।

पं० मनसाराम जी व उनके सहपाठी महाशय मोहनलाल दोनों ने यह शास्त्रार्थ सुना। पं० राजाराम जी ने श्री पं० लक्ष्मीनारायण जी से पूछा कि किस विषय पर शास्त्रार्थ होगा? उसने उत्तर दिया, "आर्यसमाज के नियमों पर।"

प्राध्यापक राजाराम जी ने कहा, "आर्यसमाज के नियम तो आप भी मानते हैं। शास्त्रार्थ तो ऐसे विषय पर हो सकता है जिसपर

आपका हमसे मतभेद हो। ऐसे चार विषय हैं (१) मूर्ति पूजा (२) मृतक श्राद्ध (३) वर्ण व्यवस्था (४) विधवा विवाह।" पौराणिक पं० ने कहा, "हम आपका एक भी नियम नहीं मानते।"

सूझबूझ के धनी पं० राजाराम जी ने अत्यन्त शान्ति से शास्त्रार्थ के पौराणिक प्रधान श्री उदमी राम पटवारी से कहा, क्यों जी! आप हमारा कोई नियम नहीं मानते?

पटवारी जी ने भी आर्य समाज के प्रति द्वेष भाव के आवेश में आकर कहा, "हम आर्यसमाज का एक भी सिद्धान्त नहीं मानते।"

प्राध्यापक राजाराम जी ने कहा, "लिखकर दो।" उदमी राम जी ने अविलम्ब लिखकर दे दिया। पं० राजाराम जी ने वह लिखा हुआ कागज सभा में पढ़कर सुना दिया कि "हम आर्यसम.ज का एक भी सिद्धान्त नहीं मानते।"

तब पं० राजाराम जी ने अपनी सुन्दर मोहक शैली में श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए कहा, आर्यसमाज का सिद्धान्त है वेद का पढ़ना पढ़ाना व सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। पौराणिक मत यह हुआ कि न वेद को पढ़ना, न पढ़ाना, न सुनना और न सुनाना। आर्यसमाज का नियम है सत्य के ग्रहण करने व असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। पौराणिक

मत का सिद्धान्त बना, असत्य को स्वीकार करने व सत्य के परित्याग में सदैव तत्पर रहना चाहिए।"

श्रोताओं के मन व मस्तिष्क पर आर्य विद्वान की युक्तियों की छाप लग गई। पटवारी उदमीराम जी का परिवार भी आर्यसमाज में आ गया। देहली के नया बाँस समाज के प्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री दलीप चन्द जी उन्हीं पटवारी जी के सुपुत्र हैं। मनसाराम जी पर पहिले ही श्री राम प्रसाद पटवारी के उपदेशों का प्रभाव था। इस शास्त्रार्थ ने तो सोने पर सुहागे का कार्य किया। मनसा राम अब आर्यसमाज का दीवाना हो गया। जी जान से वह वैदिक धर्म का सेवक बन गया।

मिडल की परीक्षा देकर वह घर पहुंचे और घर जाकर ट्रैक्ट लिखने के कार्य में लग गये। एक ट्रैक्ट 'सेह हरफी धर्मोपदेश' लिखा। यह अब अप्राप्य है। किसी के पास हो तो हमें पुनः प्रकाशन के लिए देने की कृपा करें। यह उनका सर्वप्रथम साहित्यिक प्रयास था और काव्य के रूप में था। ग्रामीण जनता में प्रचार के लिए बड़ा लाभप्रद सिद्ध हुआ। इसके पश्चात् एक और ट्रैक्ट लिखा। यह भी कविता के रूप में था। इसका नाम महाशय जी के प्यारे सखा महाशय मोहनलाल जी को भी स्मरण नहीं रहा। इसके पश्चात् एक और पुस्तिका अत्यन्त प्रिय नाम से लिखी। यह था सत्यार्थ प्रकाश का सार और इसका नाम रखा गया 'गुमराही के समुद्र में रासती की किशती' (असत्यसिन्धु में सत्य—नौका)

यह भी क्या विचित्र बात है कि इस साहित्य के प्रकाशन में देवी रत्नी का कोष काम आया। इस कोष की हम पहिले ही चर्चा कर चुके हैं।

अब आर्यसमाज टोहाना का द्वितीय वार्षिकोत्सव हुआ।

महाशय मोहनलाल जी के बड़े भाई महाशय रामशरण जी (मास्टर हरिचन्द के पिता) इसमें भाग लेने के लिए मित्र मण्डली को लेकर टोहाना पहुंचे। उन दिनों आर्यों को कड़े विरोध का सामना करना पड़ता था। मनसाराम जी भी अपने सहयोगियों का एक दल लेकर अघ अज्ञान की शक्तियों से टक्कर लेने के लिए टोहाना पहुचे। वहां उन्होंने अत्यन्त श्रद्धा से सेवा की।

प्रेम की गंगा

पाठकों को हम बता चुके हैं कि मनसाराम जी को मुन्शी शमस-उद्दीन के प्रति जो अंध भक्ति थी। मोहन लाल जी उससे बहुत दुखी थे। बात यहां तक जा पहुंची कि दोनों मित्रों की इसी कारण बोलचाल भी बन्द हो गई। सम्बंधों में कटुता ही नहीं आई अपितु सम्बंध विच्छेद ही हो गये। टोहाना में मनसाराम जी ने मोहनलाल जी के नाम एक चिट भेजी कि आर्य समाज का एक नियम यह भी है कि प्रीतिपूर्वक रहना चाहिए परन्तु आप मेरे से बोलते भी नहीं। आप मुझ से पहिले आर्य समाजी बने। अतः आपको मुझसे रुष्ट नहीं रहना चाहिए।

आज सभाओं व समाजों में पदों के लिए लड़ने वाले इस घटना से कुछ सीखें।

महाशय मोहन लाल चिट पढ़कर गदगद हो गये और कहा, मुन्शी शमस—उद्दीन के कारण तुम्हारा आर्यसमाजी बनना तो दूर रहा, तुम्हारा हिन्दू रहना भी असम्भव था।

आज इससे बढ़कर हर्ष की क्या बात हो सकती है कि तुम्हारे जीवन ने पलटा खाया है। तुम पवित्र वेद की सम्पदा से सम्पन्न हो गये हो। उस दिन से आर्यसमाज के ये दोनों सपूत घनिष्ठ मित्र बन गये। जब तक पं० जी जीवित रहे, महाशय मोहनलाल ही नहीं अपितु उनका सारा कुटुम्ब पं० जी के संकेत मात्र पर वैदिक धर्म की सेवा में जुटा रहा।

★★★★

संस्कृत अध्ययन की धुन

मनसाराम जी के मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि कई बार वेद शास्त्र का जो प्रमाण आर्य विद्वान देते हैं पौराणिक पंडित उसके कुछ और ही अर्थ कर देते हैं। यद्यपि बुद्धि आर्यसमाज की बात को मानने पर विवश होती है तथापि एक बार संस्कृत अवश्य पढ़नी चाहिए। शास्त्रों के ज्ञान सागर में डुबकी लगाने की लालसा से उन्होंने देव वाणी पढ़ने का अटल निश्चय कर लिया। सत्य असत्य का निर्णय करने का यही सुगम मार्ग था कि स्वयं संस्कृत पढ़कर शास्त्रों का स्वाध्याय किया जावे।

इस सङ्कल्प को मन में संजोए हुए वह हिसार की हरियाणा कुरुक्षेत्र सनातन धर्म संस्कृत पाठशाला में प्रविष्ट हो गये। यहां कौन २ उनके मित्र व सहपाठी थे इसका कोई ठीक २ ज्ञान तो हमें है नहीं। हां! उनके एक अनन्य भक्त, मित्र व सहपाठी का इन पंक्तियों के लेखक को निश्चित रूप से ज्ञान है। यह थे हिसार के दिवंगत आर्य

कवि बनवारी लाल जी आजाद।' वह सदैव सगर्व कहा करते थे कि मैं वैदिक तोप पं मनसाराम जी का सहपाठी हूं। वृद्ध अवस्था में भी उनके जोश में कोई न्यूनता न आई। 'आजाद' जी कपड़े सिया करते थे। यहां यह उल्लेख कर देना बड़ा रुचिकर होगा कि इन्हीं 'आजाद' जी की कृपा से आर्यसमाज को दो उत्साही दीवाने मिले। एक हैं श्री सुखदेव राज आर्य पूर्व शिक्षक आर्यवीर दल पंजाब व दूसरे हैं डा० राजेन्द्र जी आर्य जिनको इन दिनों अमरीका में विद्या-अध्ययन करते हुए भी वैदिक धर्म के प्रसार की धुन लगी हुई है।

✝ २६.१२ १९२४ ई० को भटिण्डा सनातन धर्म सभा के उत्सव पर जब पं० मनसाराम वैदिक तोप' की शंकाओं से पौराणिक मण्डली में खलबली मची तो पौराणिकों ने पं० जी की संस्कृत की योग्यता का प्रश्न खड़ा कर दिया तब भरी सभा में पं० जी ने उक्त पाठशाला द्वारा पं० जी को प्रदान किया गया रजत पदक व काशी तथा पंजाब विश्वविद्यालय की उपाधियाँ उसी समय सभा में उपस्थित करके पौराणिक पं० राज नारायण अरमान को चैलंज दिया कि उसके पास कोई संस्कृत की योग्यता का प्रमाण हो तो दिखावे। वह बेचारा तो हिन्दी भी न जानता था संस्कृत का ज्ञान कहां से लाता।

✝ रावन जोगी के भेस में (उर्दू)

हरिद्वार कंखल में

हिसार से मनसाराम जी भागीरथी पाठशाला कंखल चले गये। तीन चार वर्ष वहाँ पढ़ते रहे परन्तु तृप्ति न हुई। कंखल में बहुत से लोग संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों को भोजन का न्योता देते रहते थे। विद्यार्थियों को भोजन के पश्चात् एक रुपया दक्षिणा भी मिल जाती। दिन के समय छात्र अधिक खा लेते और इस कारण कुछ पढ़ न सकते थे। रात्रि को उपवास के कारण पढ़ाई न कर पाते। मनसाराम जी के मन में तो विद्या के लिए प्यास थी अत आपने न्योता खाना छोड़ दिया।

चपड़ासी मनसाराम

कंखल में भी मनसाराम जी की सन्तुष्टि न हुई। आप ने गुरूकुल कांगड़ी मे चपड़ासी की नौकरी ले ली। उद्देश्य यही था कि गुरूकुल में रहकर कुछ संस्कृत पढ़ लूंगा और चपड़ासी रहकर आर्य-समाज की सेवा भी कर पाऊंगा। वैदिक धर्म के इस बलिदानी भक्त की, इस पिपासु जिज्ञासु की मनोकामना की कोमलता पवित्रता व गहराई को जानने के लिए भी एक भावनाशील हृदय चाहिए। श्री पं० बुद्ध देव जी विद्यालंकार उन दिनों कांगड़ी में ही पढ़ाते थे। पं० बुद्ध देव जी ने इनकी प्रतिभा व तड़प को भांप तो लिया परन्तु मनसाराम जी की तृप्ति की व्यवस्था वह न कर पाए। यह भी क्या विडम्बना है कि पोपडम के दुर्ग ढाने वाला यह आर्य पुरुष कांगड़ी से निराश होकर चला गया। संस्कृत विद्या का यह पिपासु वहाँ से काशी चला गया।

हा ! दानियों का पुत्र भूखा

काशी में संस्कृत के छात्रों के लिए कई दानी लोगों ने बड़े २ छत्र (भोजन भण्डार) लगा रखे थे परन्तु मनसाराम जी को इन भण्डारों से भोजन नहीं मिलता था। यहां से केवल जन्म का ब्राह्मण छात्र ही भोजन ले सकता था। संस्कृत भाषा का यह निष्ठावान पुत्र अनेक बार उपवास रखने पर ही विवश होता। देव वाणी के दुलारे ने, देव दयानन्द के इस प्यारे ने कितने दिन भूखे रहकर बिताए ? लेखनी उनकी इस सतत साधना की अकथनीय गाथा का वर्णन करने में अक्षम है। वे अघ अज्ञान के कूप में गिरे हुए पोटार्थी नामधारी ब्राह्मण तब क्या जानते थे कि युगद्रष्टा बाल ब्रह्मचारी दयानन्द के तपोबल से व अपनी सतत साधना से मनसाराम एक दिन ब्राह्मण पद को पाके रहेगा। संसार की कोई भी शक्ति इस छात्र को सच्चा ब्राह्मण बनने से न रोक सकेगी।

एक दिन मनसाराम जी बाहर झाड़ियों में से सूखे बेर चुन २ कर अपने लोटे में डाल रहे थे। उधर से एक सेठ जी आ गये। सेठ भांप गया कि यह संस्कृत का विद्यार्थी है। पूछा, "क्या कर रहे हो ?"

मनसाराम जी ने उत्तर दिया, "संस्कृत पढ़ने यहां आया हूं। भूखा रहता हूं। पढ़ने की लगन है। इन बेरों को भिगो कर रख दूंगा। जब भूख लगेगी तो खा लूंगा।"

सेठ ने पूछा, "छत्र में भोजन क्यों नहीं करते ?" मनसाराम जी ने कहा, "वहां तो केवल ब्राह्मणों को ही भोजन मिलता है। मैं तो जन्म से अग्रवाल हूं।"

पाठक स्मरण रखें कि मनसाराम जी चाहते तो झूठ बोलकर भोजन कर सकते थे परन्तु उनको असत्य भाषण से घृणा थी। यह बात भी क्या विचित्र है कि अग्रवाल जो अपनी दानशीलता के लिए प्रसिद्ध हैं उन्हीं का एक युवक पेट भर रोटी न पा सकने के कारण सूखे बेरों पर निर्वाह करके विद्या अध्ययन करता रहा।

धिक्कार है इस जाति पाति को।

वह सेठ जिसने मनसाराम जी को बेर चुनते देखा था वह भी तो वैश्य था। सेठ जी को मनसाराम जी की यह अवस्था देखकर बड़ा दुःख हुआ। वह सेठ स्वयं भी ऐसे कई भोजन भण्डारों को दान दिया करता था। उसने मनसाराम जी से कहा, "तुम अब अमुक भण्डारे में जाकर भोजन किया करो वहां कोई तुम्हारी जाति नहीं पूछेगा।" सेठ जी ने वहां मनसाराम जी के लिए विशेष आदेश दे दिया। अब वह निश्चिन्त होकर पढ़ाई में जुट गये।

विशारद की परीक्षा तो उत्तीर्ण कर ली परन्तु शास्त्री में असफल रहे। असफलता उनके धीरज को न तोड़ सकी। वह निरन्तर धर्म ग्रंथों के अध्ययन में लगे रहे। आपने बनारस व पंजाब विश्वविद्यालय की संस्कृत की तीन ऊंची उपाधियां प्राप्त कीं।

काशी में विद्या-अभ्यास करके मनसाराम काशी के पण्डितों की मण्डली में गये और उनके सामने एक प्रश्न रखा कि मैं जन्म से अग्रवाल हूं क्या मुझे अब पण्डित कहलाने का अधिकार प्राप्त हैं अथवा नहीं ? इस पर बड़ा वादविवाद हुआ। मनसाराम जी की विजय हुई। उनको

पण्डित की पदवी प्रदान की गई।

अब वह पण्डित मनसाराम आर्य कहलाने में गौरव अनुभव किया करते थे। आर्य शब्द से उनको विशेष अनुराग था। आर्य कहने व कहलाने में उनका उत्साह उछलता था। उनकी धमनियों में धर्म प्रेम की बिजलियां कौंदती थी।

'पोप पर तोप'

आज भी पं० माधवाचार्य आदि पौराणिक विद्वान ब्राह्मणेतर परिवारों में उत्पन्न दिग्गज आर्य विद्वानों को पण्डित कहने को तैयार नहीं तार्किक शिरोमणि श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी को माधवाचार्य ने सदा लाला ही लिखा व कहा। पं० जी स्वर्णकार कुल में जन्मे अतः उनको स्वर्णकार लिखकर यह पौराणिक पण्डित अपने मिथ्या जातीय अभिमान की तुष्टि पुष्टि करता रहा है। इसी प्रकार ये लोग पूज्य पं० मनसाराम जी को भी पण्डित नहीं मानते थे। सदैव उनको भी लाला ही लिखा व कहा करते थे। लाला शब्द कोई बुरा तो नहीं। न ही पं० मनसाराम जी को इस से कोई चिढ़ थी परन्तु पौराणिक मण्डली के मान मदन के लिए वह उस अधिकार से वञ्चित होने को तैयार न थे जो अधिकार उनको महर्षि की कृपा से प्राप्त हुआ था। यहाँ यह बात सदा विचारणीय है कि यदि ईश्वर को जन्म की वर्ण व्यवस्था मान्य होती तो कदापि कोई ब्राह्मणेतर व्यक्ति ब्राह्मण न बन पाता, शूद्र कुलोत्पन्न व्यक्ति क्षत्रिय न बन सकता। क्षत्रिय घराना में जन्मा बालक वैश्य न बन सकता। जब

ईश्वर भी रामचन्द्र देहलवी को वेद विद्या व शास्त्र ज्ञान प्राप्त करने से न रोक सका, जब सर्वत्र व्यापक सर्वशक्तिमान प्रभु भी मनसाराम को मनस्वी शास्त्रज्ञ बनने से न रोक सका तो ये पौराणिक किस प्रकार सूर्य के प्रचण्ड प्रताप को ढांप सकते थे ?

"पौराणिक पोप पर वैदिक तोप" ग्रंथ की भूमिका के पश्चात प० जी ने पहिला विषय ही यही लिया :— **'लाला जी और पोप जी।'** इस पुस्तक के आरम्भ में ही पं० जी ने ऋषि के नीति सूत्र 'यथायोग्य' के अनुसार पद लिखा है। :—

जैसे को वैसा मिले मिलकर करे न कोप।
पण्डित को लाला कहे तभी कहावे पोप।

प्रतीत होता है कि यह पद पं० जी की अपनी रचना है। हम पहिले ही बता चुके हैं कि पूज्य पं० जी कवि भी थे।

इस **'लाला जी और पोप जी'** विषय को लेते हुए अन्त में आपने लिखा है, "चूंकि हम समझते हैं कि सनातन धर्म के ठेकेदारों ने अपने दृष्टिकोण को सामने रखते हुए हमको पण्डित की बजाए लाला शब्द से सम्बोधित करके ब्राह्मण और पण्डित शब्द का अत्यन्त अपमान किया है अतः हम इस प्रकार के मूढ़, हठी व स्वार्थी लोगों को अपने दृष्टिकोण से गुण कर्म स्वभाव अनुसार ब्राह्मण एवं पण्डित शब्द का अधिकारी न समझकर पोप शब्द से ही अपनी पुस्तक में सम्बोधित करेंगे।"

प्रचार क्षेत्र में

काशी से आप गुरुकुल कांगड़ी में गये फिर सुलतानपुर लोधी में आर्योपदेशक बनकर गये। फिर आर्यसमाज सिरसा में प्रचार करते रहे। पं० जी के व्यापक स्वाध्याय की, प्रत्युत्पन्नमति की, साहस की सर्वत्र धाक जमने लगी। उनके व्याख्यानों की धूम चहुंदिश मच गई। आर्य जगत में अल्पकाल में ही यह चर्चा फैल गई कि आर्यसमाज के गौरव गगन पर एक नये नक्षत्र का प्रकाश होने लगा है। थोड़े समय में ही वह कीर्ति के नभ पर बहुत चमकने लगे।

आर्यसमाज के लौह पुरुष, दूरदर्शी, गुणियों के पारखी सुधीर नेता स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द जी महाराज सिरसा पधारे। स्वामी जी की दिव्य दृष्टि ने पं० मनसाराम जी की विद्वत्ता व योग्यता को पहचान लिया :—

गुणा गुणज्ञेषु गुणाः भवन्ति, ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः।
आस्वाद्यतोया प्रवहन्ति नद्यः, समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः ॥

पूज्य स्वामी जी के आकर्षक व्यक्तित्व ने पं० मनसाराम जी को खींच लिया। स्वामी जी ने अनुभव किया कि पं० मनसाराम जी की बहुमुखी प्रतिभा विस्तृत क्षेत्र मांगती है। वैदिक धर्म के इस दीवाने को स्वामी जी महाराज आर्य प्रतिनिधि सभा की सेवा में ले आए। पं० जी महाराज ने सारे पंजाब का भ्रमण किया। उनमें वीरवर लेखराम जैसी

धर्म धुन थी। हुतात्मा लेखराम की भांति अदम्य उत्साह से पं० मनसाराम जी ने स्थान २ पर महर्षि दयानन्द का सन्देश दिया। उन दिनों आवागमन की वर्तमान सुविधायें प्राप्त न थीं। यातायात के साधनों की बात तो दूर रही आने जाने के लिए सड़कें भी तो इतनी न थी। जहां रेल, तांगा या मोटर न जाती थी वहाँ भी पं० जी सहर्ष पैदल चले जाया करते थे। जहां भी सभा ने भेजा वहीं पहुंच जाते। जहां वचन देते वहां अवश्य पहुंचते।

शास्त्रार्थों में उनकी विशेष अभिरुचि थी। सत्य असत्य के निर्णय के लिए, पाप पुण्य के युद्ध में, अघ अज्ञान के अंधकार के संहार के लिए वह प्रतिक्षण तैयार रहते थे। शास्त्रार्थों में कई बार उनका जीवन सङ्कट में पड़ गया। वह वज्र सङ्कल्पी व आत्म विश्वासी आस्तिक पुरुष थे। मौत की धमकियों से वह कभी नहीं डरे। वीर लेखराम की अड़ियल सेना में कायरों का क्या काम ? उनके मन में कभी भय के कारण कम्पन पैदा नहीं हुआ। उस धीरजधारी, सत्यनिष्ठ की अकाट्य युक्तियों, मौलिक विचारों, वचन कर्म की एकता, सेवा भाव व तड़प से प्रभावित होकर एक दो नहीं सहस्रों मानवों का हृदय परिवर्तन हुआ। अनेकों का मन व मस्तिष्क वेद ज्ञान रूपी सूर्य के अलौकिक प्रकाश से आलोकित हुआ। उनका नाम मात्र सुनकर ही पाखण्डियों के हृदय शङ्कित कम्पित हों जाते थे। विनीत ने एक गीत में लिखा है :-

ऐसी ज्योति जगाई दयानन्द ने।
आंख में दुशमनों की खटकते रहें॥
होश पाखण्डियों के तो ऐसे उड़े।
नाम सुनकर हमारा खिसकते रहे॥

'अद्वितीय शास्त्रार्थ माहरथी'

पूज्य पं० मनसाराम जी ने अपने जीवन काल में कई शास्त्रार्थ किये। श्रीमान पं० शान्तिप्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी ने एक बार श्री पं० मनसाराम जी की चर्चा करते हुए मुझे बताया था कि यद्यपि आज के कई आर्य समाजी विद्वानों का श्री पं० मनसाराम जी से कहीं अधिक स्वाध्याय है तथापि शास्त्रार्थ की कला में उन जैसे प्रवीण बहुत कम विद्वान मिलेंगे। श्री पं० शान्तिप्रकाश जी के अतिरिक्त और भी कई पुराने व्यक्तियों से मैंने सुना है कि शास्त्रार्थ में पं० मनसाराम जी की सूझबूझ व प्रत्युत्पन्नमति को देखकर अपने बेगाने सब वाह! वाह! कर उठते थे।

श्री पं० रामनाथ जी ने एक बार मुझे बताया कि रोपड़ में पौराणिकों से आर्यसमाज का शास्त्रार्थ हो गया। कई विद्वान बुलाए गये। शास्त्रार्थ समाप्त होने में ही न आया। तब आर्य प्रतिनिधि सभा से प्रार्थना करके श्री पं० मनसाराम जी को बुलाया गया। पं० जी ने आते ही कहा, कितने समय में शास्त्रार्थ समाप्त कराऊं? यदि चाहो तो एक ही घण्टा में वैदिक धर्म की जय जयकार करवा दूं। यदि अधिक प्रचार चाहो तो एक दो दिन में समाप्त करा दूं।"

पं० मनसाराम जी अब आर्यसमाज की ओर से शास्त्रार्थ में चले। आपने अपनी योग्यता व विद्वत्ता के कौतुक दिखाए। आर्य दर्शन का मण्डन सबल प्रबल युक्तियों से किया एवं पाखण्ड खण्डन इतने सुन्दर ढंग

से किया कि मिन्टों में दम्भ दर्प के दुर्ग भूमि पर बिछते हुए दीखने लगे। पौराणिकों के ऐसे छक्के छुड़ाए कि भागते ही उनको बन आई। इस शास्त्रार्थ के लिए रोपड़ के एक आर्य नेता ने आर्य शास्त्रार्थ महारथियों को अङ्क दिये। किसी को ६०%, किसी को ५०% और किसी को ७०% अङ्क दिये। श्री पं० मनसाराम जी को १००% अङ्क दिये गये। यह उनकी असाधारण योग्यता, सूझबूझ व प्रत्युत्पन्नमति की मान्यता का स्पष्ट प्रमाण है।

एक बार रामां मण्डी में एक जैन विद्वान आए। उनके विचार सुनने के लिए बहुत लोग जैन मन्दिर में जाया करते थे। एक दिन सभा की समाप्ति पर जब सब सज्जन चले गये तो किसान वेश में एक ग्रामीण भाई ने जैनियों के अहिंसा सम्बंधी सिद्धान्त पर कुछ प्रश्न कर दिये। प्रश्न सुनते ही जैनी विद्वान ने कहा, "आप पं० मनसाराम तो नहीं ? ये प्रश्न वही कर सकता है। साधारण व्यक्ति इतना गहरा सोच ही नहीं सकता।" सच्चमुच वह ग्रामीण व्यक्ति पं० मनसाराम ही तो थे। उनको पता था कि जैनी विद्वान शास्त्रार्थ करने से कतराएगा। वह शास्त्र चर्चा के लिए बड़े उत्सुक थे। अत: किसान वेश में जा कर शंकाये कर दीं। इस घटना से पं० जी की अन-आर्य समाजी विद्वानों के हृदयों पर बैठी धाक का पता चलता है। यह घटना मुझे रामां के आर्य सज्जन महाशय किशोर चन्द पटवारी जी ने सुनाई।

एक बार भिवानी जिला हिसार में पौराणिकों से उनका शास्त्रार्थ हो गया। उन दिनों यशस्वी आर्य दानी, दृढ़ ऋषि भक्त एवं पं० जी के निकटतम मित्रों में से एक दिवंगत महाशय हंसराज जी आर्य वरेटा वाले भिवानी ही रहते थे। पौराणिकों ने पं० जी को उनका पूरा समय न दिया। पं० जी ने शास्त्रार्थ के नियमानुसार अपना पूरा समय २५ मिनट मांगे। पं जी बड़े निर्भीक व निर्भीक थे। अपनी बात पर डट गये।

वारम्बार पूरा समय देने के लिए पौराणिकों से कहा। उन्होंने उत्तर में पं० जी पर लाठियों से प्राण लेवा आक्रमण कर दिया। लाठियों की भीषण वर्षा हुई। मुट्ठी भर आर्यों ने धैर्य, दृढ़ता व साहस से लाठियों के प्रहार सहे एवं पं० जी की रक्षा का प्रत्येक सम्भव यत्न किया। धर्मवीर महाशय हंसराज आर्य ने आपकी रक्षा करते हुए स्वयं अपने ऊपर लाठियों के वार सहन किये। तब जोश में आकर कुछ आर्य वीरों ने आपसे कहा कि हमें इस दुष्टता का यथायोग्य उत्तर देने दीजिए। आपने कहा, "नहीं मार खाओ यही ठीक है।"

इस शास्त्रार्थ के पश्चात् आपने एक बड़ा महत्वपूर्ण ओजस्वी ट्रैक्ट लिखा जिसका नाम था मेरे 'पच्चीस मिनट'। पौराणिकों ने शीघ्र ही अपनी मूर्खता व धूर्तता के लिये क्षमा मांग ली। आपने बड़ी उदारता से अविद्या के रोगियों को क्षमा कर दिया। इस शास्त्रार्थ का ऐसा प्रभाव पड़ा कि भिवानी के पंसारी श्री टेकचन्द जी ने पाषाण पूजन के महापाप का परित्याग किया। प्रतिमायें फैंक दीं और आस्तिक बन गये।

आपके शास्त्रार्थ की यह विशेषता थी कि आप जैसे को तैसा उत्तर देते थे। प्रश्न के सर्वथा अनुरूप उत्तर देने की कला में आप निपुण थे। शास्त्रार्थ समर में वह विपक्षी पर कतई दया नहीं करते थे। उनका हृदय ही 'पाखण्ड खण्डिनी पताका' था। यदि विपक्षी अश्लील व अभद्र शब्दों का प्रयोग करने पर उत्तर आता तो आप युक्ति, प्रमाण व दार्शनिक भाषा में ऐसा करारा उत्तर देते कि प्रतिद्वन्दी की वाणी पर तत्क्षण ताला लग जाता। इसका एक उदाहरण यहां देना उपयुक्त रहेगा।

ऋषिवर ने यजुर्वेद भाष्य में एक स्थान पर ऐश्वर्य के लिए बैल से भोग करें। यह वाक्य लिखा है। सत्य असत्य को जानने की चाह

रखने वाले बिना किसी की सहायता के इस स्पष्ट वाक्य के सरल शुद्ध उपदेश को समझ लेते हैं। ऋषि ने भोग शब्द का प्रयोग उपभोग अर्थ में किया है। ऋषि ने सत्यार्थ प्रकाश में माँस भक्षण के प्रसंग में लिखा है:—

"जितना हिंसा और चोरी विश्वासघात छल कपट आदि से पदार्थों को प्राप्त होकर भोग करना है वह अभक्ष्य और अहिंसा धर्म आदि कर्मों से प्राप्त होकर भोजन आदि करना भक्ष्य है——"।

इस उद्धरण से भी स्पष्ट है कि महर्षि ने भोग शब्द का प्रयोग उपभोग के अर्थ में किया है परन्तु पापी पेट के लिऐ कुछ पौराणिक विद्वान इस शब्द के अर्थ का अनर्थ करते रहे। उनका दोष भी क्या ? पुराणों में भोगवाद की इतनी अश्लील कहानियां हैं कि उनको सुन २ कर और सुना २ कर पौराणिक पण्डितों के संस्कार ही ऐसे बन चुके हैं कि उनको सर्वत्र भोगवाद ही दीखता है, सावन के अंधे को जैसे हरा ही हरा दीखता हैं, पीलिए के रोगी को जैसे सब कुछ पीला ही दिखाई देता है। संस्कार दोष के कारण ऋषि दयानन्द के शब्दों में भी उनको अपने अश्लील पौराणिक भाव ही दीखते रहे हैं। आर्यों ने सद्भावना से इसका लिखित व मौखिक उत्तर अनेक बार दिया। स्वयं श्री पं० मनसाराम जी ने वैदिक तोप' आदि ग्रंथों में इसका युक्तियुक्त उत्तर दिया।

जब दुर्बुद्धि दुराग्रही व हठी इस पर भी अपनी पुरानी रट ही लगाते रहे तो आपने एक शास्त्रार्थ में कहा महात्मा तुलसीदास जी ने

सन्त समागम हरि कथा तुलसी दुर्लभ दोय।
सुत दारा और लक्ष्मी पापी के भी होय॥

इस दोहे में 'सन्त समागम' शब्द हमारे विचार में अत्यन्त पवित्र भाव से प्रयुक्त किये हैं। आपने विपक्षी से पूछा क्या आप इन शब्दों का भी

अपनी पौराणिक शैली में ही अर्थ करेंगे ? पं० जी से यह उत्तर पाकर विपक्षी को चुप्पी साधनी पड़ी।

पाठकवृन्द ! स्मरण रखें कि महर्षि दयानन्द जी महाराज हिन्दी भाषा को वर्तमन रूप के देने वाले प्रथम साहित्यकार हैं। उनके युग की भाषा आज से बहुत भिन्न थी तथापि जिन अर्थों में यजुर्वेद भाष्य के उपरोक्त प्रसंग में ऋषि ने भोग शब्द का प्रयोग किया है वह आज भी पौराणिकों में प्रचलित हैं। यथा 'मोहन भोग', 'भगवान को भोग लगाने मन्दिर गये' आदि आदि। इनमें अपवित्र भाव पापात्मा ही ढूंढेगा धर्मात्मा नहीं।

सविस्तार मैंने यह प्रसंग इस लिए दिया है ताकि पाठक पं० जी की 'जैसे को तैसा' की नीति को समझ सकें। ऐसे और भी कई प्रसंग मुझे ज्ञात हैं जो पुस्तक के आकार भय के कारण यहां नहीं दे रहा।

पं० लेखराम जी के समान भय वाली नस आप में थी ही नहीं। शास्त्रार्थ समर सर्वथा निर्भय होकर खड़े हों जाते थे। एक बार टोहाना के समीप के एक गाँव में पौराणिकों से शास्त्रार्थ हो गया। उसी क्षेत्र के एक ब्राह्मण ने शास्त्रार्थ के लिए ललकारा था। पं० जी का जन्म भी तो इसी क्षेत्र का था। अतः वह पं० जानता था कि पं० मनसाराम जी अग्रवाल कुल में उत्पन्न हुए हैं। उसने बड़े अभद्र शब्दों में कहा आप तो रंग के काले हैं पहिले यह सिद्ध करो कि तुम ब्राह्मण हो।

पं० जी ने कहा मैं गुण कर्म स्वभाव से ब्राह्मण हूं। इसमें सन्देह की क्या बात ?

उस पौराणिक ने कहा, "ब्राह्मण गोरे होते हैं, आप काले हैं। इसका यह अर्थ हुआ कि.............।"

इस पर किसी पास बैठे व्यक्ति ने पं० जी के कान में कहा कि इस पौराणिक पंडित का पिता गोरे रंग का नहीं था जब कि पण्डित स्वयं गोरे रंग का था। बस फिर क्या था इस जानकारी के आधार पर पं० मनसाराम जी ने उस पर ऐसा प्रहार किया कि उस के होश उड़ गये। उसने पं० जी के जन्म का उपहास उड़ाते हुए उन्हें 'गिट मिट' कहा था। अब पं० मनसाराम जी ने अपनी विशिष्ट शैली में यह उपाधि उस विपक्षी विद्वान को इस प्रकार लौटाई कि उस क्षेत्र के बच्चे उस पण्डित को जिधर से भी वह निकलता 'गिटमिट' कहकर चिढ़ाते। मुझे टोहाना के एक व्योवृद्ध सज्जन ने बताया कि उस ढोंगी, जन्मगत जाति अभिमानी, मूर्ख व अयोग्य पण्डित को अपने ही बोए हुए इस बीज के कारण अपना पैतृक ग्राम छोड़कर कहीं जाना पड़ा।

वैदिक तोप कहलाए

पं० जी 'वैदिक तोप' की उपाधि से कैसे विभूषित हुए ? इस प्रश्न का उत्तर दिये बिना जीवन चरित्र अधूरा ही रहेगा। इस उपाधि का अपना एक रोचक इतिहास है। आदरणीय पं० जी ने हिसार जिला में शास्त्रार्थों का स्थान २ पर आयोजन करके पौराणिकों में खलबली मचा दी। पं० जी का नाम सुनकर ही पौराणिक पण्डित खिसक जाते थे। पौराणिकों ने अपनी नाक बचाने के लिए प्रसिद्ध कर दिया कि आर्यों के पास पं० मनसाराम के अतिरिक्त कोई विद्वान है ही नहीं। तब २, ३ मई १९३१ ई० को आर्यसमाज जाखल के वार्षिकोत्सव पर एक शास्त्रार्थ रखा गया। आर्यसमाज के मन्त्री थे महाशय मोहन लाल जी।

स्थानीय सनातन धर्म सभा के साथ शास्त्रार्थ के लिए सब पत्रव्यवहार करके सब कुछ लिखित रूप में निर्णय किया गया ।

शास्त्रार्थ के प्रधान थे पूज्यपाद स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज। आर्यसमाज की ओर से श्रीमान प० लोकनाथ जी ने वैदिक पक्ष रखा। शास्त्रार्थ ने वैदिक सिद्धान्तों की धाक जमा दी। 'शास्त्रार्थ जाखल' नाम से उर्दू में पं० जी ने एक पुस्तक लिखी। पौराणिक इससे सटपटा उठे। पौराणिकों ने बड़ा धन व्यय करके 'सनातन धर्म विजय' नाम से एक पुस्तक लिखवाई। पुस्तक क्या थी एक गाली गलोच विशेषाङ्क था। तब पं० मनसाराम जी ने बड़ी सभ्य भाषा में, युक्ति व प्रमाणों से पौराणिकों का मुंह बन्द करने के लिए उर्दू में १२२४ पृष्ठों का एक ग्रंथ लिखा। इसका नाम था 'पौराणिक पोप पर वैदिक तोप'। १९३३ ई० में गुप्त एन्ड कम्पनी टोहाना ने इसका प्रकाशन किया।

इस ग्रंथ के प्रकाशन से सब ओर पं० मनसाराम जी की धूम मच गई। अब उनका नाम ही 'वैदिक तोप' प्रसिद्ध हो गया। महाशय धर्म मित्र जी ने लिखा है :—

पाखण्ड गढ़ को ढा दिया जरनैल मनसाराम ने।
नकली सनातन धर्म का कर ऐक्स-रे दिखला दिया॥

पं० जी के ग्राम का नाम नंगल हड्डां वाला है। पं० जी के कारण गांव का नाम भी नंगल आर्या पड़ गया। स्मरण रहे कि जब वैदिक तोप ग्रंथ लिख रहे थे उन्हीं दिनों पत्नी का निधन हो गया।

पाण्डित्य

उनका अध्ययन गहन व व्यापक था। एक विद्वान ने एक बार मुझे बताया कि एक आर्य समाज में वह बोलने के लिए वेदी पर बैठे तो श्रोताओं से पूछा, "बोलो किस विषय पर बोलूं?"

लोगों ने कहा, "जिस पर आप चाहें।"

आपने कहा, "जिस भी वैदिक सिद्धान्त पर आप कहेंगे मैं उसी पर बोलूंगा।" वह राजनैतिक चटपटी बातों पर 'अखबारी लेक्चर नहीं दिया करते थे। न इधर उधर की बे तुकी, व्यर्थ की बातों में उनको रुचि थी। वह बड़े रोचक ढंग से सप्रमाण व्याख्यान दिया करते थे। वैदिक तत्त्वज्ञान में उनकी जान थी। ऐसा कहकर ही मैं वेद के प्रति उनकी अडिग श्रद्धा को व्यक्त कर सकता हूं।

'स्वाधीनता संग्राम में'

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आर्यसमाज के प्रभु भक्ति के भजनों ने हमारे स्वाधीनता संग्राम में राजनैतिक स्वर को ऊंचा करने में बड़ा योगदान दिया। आर्यसमाजी गाया करते थे:—

स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें।
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो॥

श्री चन्द्र कवि, कुंवर सुखलाल आर्य मुसाफिर कविरत्न व पीयूषजी व स्वामी नित्यानन्द (हरियाणा) आदि भजनोपदेशकों ने स्वाधीनता संग्राम में जेल यात्रायें की। आर्यसमाज के साधु, उपदेशक नेता व कार्यकर्ता विदेशी राज को उखाड़ने के लिए देश में विदेश में संघर्ष करते रहे। अनेकों ने वीर गति पाई।

पं० मनसाराम जी जैसे तेजस्वी व्यक्ति का स्वतन्त्रता के आन्दोलन में आगे आना स्वाभाविक ही था। वह कई बार देश हित में बन्दी बनाए गये। १९२२ ई० में गाधी जी ने पहला सत्याग्रह चलाया तो हमारे चरित्र नायक भी जेल गये। हिसार जेल में आपको रखा गया। क्रान्तिकारी दयानन्द के मेधावी वीर शिष्य ने तब स्वतन्त्रता के इस युद्ध में एक बड़ी साहसिक बात की। इसे हम अपने स्वाधीनता संग्राम की एक स्वर्णिय घटना कहें तो अत्युक्ति न होगी।

पं० जी को हिसार में मैंजस्ट्रेंट के सामने वक्तव्य के लिए लाया गया। आपने अपने नयनों पर कपड़ा डाल लिया। इसका कारण पूछा गया। तो आपने कहा, जो व्यक्ति चांदी के कुछ श्वेत टुकड़ों (तब रुपया चांदी का होता था) के लिए अपने आपको बेच दे मैं उसकी आकृति भी नहीं देखना चाहता।" स्पष्ट है कि यह न्यायालय का अपमान था। इस लिए सत्याग्रह के साथ एक और अभियोग *Contempt of Court* न्यायालय के अपमान का भी चलाया गया। यह अभियोग बहुत लम्बा चला।

प० जी खादी के धोती कुर्ते व गांधी टोपी में एक अच्छे नेता जंचते थे। उन्होंने स्वदेशी का व्रत लिया और दूसरों को भी सदा स्वदेशी की प्रेरणा देते थे।

हैद्राबाद सत्याग्रह

जब आर्यों ने दक्षिण में निज़ाम हैद्राबाद से लोहा लिया तो पं० मनसाराम वैदिक तोप भी दक्षिण को चल दिये। आप शोलापुर में पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के चरणों में उपस्थित हुए। सत्याग्रह करने के लिए आर्शीवाद मांगा परन्तु स्वामी जी महाराज ने आपको सत्याग्रह की अनुमति न दी। गुरु की आज्ञा विवश होकर माननी पड़ी परन्तु आपके अरमान दिल के दिल में ही रह गये। बाल, वृद्ध जवान जेलों की ओर मार्च कर रहे थे। सब में होड़ लगी हुई थी। आपके सखा महाशय हंसराज व महाशय रामशरण भी तो जेल चले गये परन्तु कर भी क्या सकते थे। सेनानी भी कोई साधारण व्यक्ति न था। उस सुधीर साधु का अनुशासन बड़ा कड़ा था।

निधन

जून १९४१ ई० को पं० जी का बडलाढा मण्डी ज़िला हिसार हरियाणा में देहान्त हो गया। उस समय वह अपने भांजों के पास थे। उनको कारबंकल फोड़ा निकल आया। उन दिनों यह एक असाध्य रोग था। उपचार तो किया गया परन्तु पं० जी स्वस्थ न हो सके। अब उनका पार्थिव शरीर जर्जर हो गया। इस शरीर ने देश जाति के लिए बढ़चढ़ कर कार्य किया। अपने ग्रंथों के रूप में स्थिर देन दी। अब वह

तो हमारे मध्य में नहीं है परन्तु उनकी कीर्ति की गंध से हमारे हृदय व मस्तिष्क आज भी सुवासित हो रहे हैं। एक विद्वान के शब्दों का प्रयोग करूं तो मैं अपनी भावना इस प्रकार व्यक्त कर सकता हूं कि अब उनका 'कीर्तिमय पुतला' अपना कार्य कर रहा है।

पं० जी जब व्यक्तिगत सत्याग्रह में कूदने का निश्चय कर चुके तो काल की गति–निधन हो गया।

पं० जी की पत्नी श्रीमती धन लक्ष्मी का तो बहुत पहिले देहान्त हो चुका था। उनका एक पुत्र है जिसका नाम श्री सत्यपाल है। श्री सत्यपाल जी वैद्य हैं,और आजकल भटिन्डा में सपरिवार रहते हैं। कुछ समय सेना में भी रहे। पं० जी की सुपुत्री मानसा रहती है। दोहत्र प्रकाश चन्द्र 'बाग़ी' पत्रकार भटिण्डा रहता है।

पं० जी के प्रसिद्ध शास्त्रार्थ

कुलरियां (बरेटा मण्डी के निकट) ज़िला भटिन्डा। कसूर, सरियां पटियाला राज्य में। इसके अध्यक्ष थे सेठ शम्भु प्रसाद जी बबनपुर, अम्बाला केन्द्रीय कारावास। इसके अध्यक्ष थे डा० सन्तराम अमृतसरी, जैतो मण्डी ज़िला भटिन्डा। प्रधान थे श्री हरिचन्द पलेटियर, भटिण्डा शास्त्रार्थ। इसके प्रधान थे श्री सेठ रामचन्द्र मारवाड़ी। शास्त्रार्थ रोपड़। संगरूर शास्त्रार्थ। महाशय प्रेम प्रकाश जी धूरी बताते हैं कि तीक्षण बुद्धि पं० मनसाराम जी एक ही उत्तर में पाँच पांच प्रश्नों का उत्तर दे देते थे। लड़ाई का भी भय था परन्तु निर्भीक मनसाराम तनी हुई लाठियों से तनिक न घबराए।

कुलरियां शास्त्रार्थ

पौराणिक विद्वान कालूराम ने बरेटा मण्डी (पंजाब) के निकट कुलरियां ग्राम में संस्कृत में शास्त्रार्थ की बड़ी रट लगाई। उसने ग्रामीणों को बहकाया कि आर्य पण्डित संस्कृत में शास्त्रार्थ नहीं कर सकते। आर्यों ने कहा कि पौराणिक पण्डितों को पुराणों की पोल खुल जाने का भय हैं इस लिए संस्कृत का बहाना बनाया जा रहा हैं;

अन्त में निश्चय हुआ कि पांच २ मिनट संस्कृत में और इतना ही समय हिन्दी में दोनों पक्ष बोलेंगे। पौराणिकों की ओर से पं० कालू राम जी सस्कृत में बोलते और हिन्दी में कोई अन्य विद्वान। आर्य समाज की ओर से श्री पं० शान्तिप्रकाश जी संस्कृत में और श्री पं० मनसाराम जी वैदिक तोप हिन्दी में बोलते।

दोनों पक्षों ने यह भी स्वीकार किया कि यदि संस्कृत बोलते २ किसी भी पक्ष के पण्डित ने किसी और भाषा का शब्द प्रयुक्त किया तो उस पक्ष की पराजय समझी जाएगी और शास्त्रार्थ समाप्त समझा जाएगा।

पांचवी बारी में पं० कालूराम जी ने अपने संस्कृत भाषण में यह कहा कि:— "एतानि मिनिटानि सप्रति अवशिष्यन्ते।"

आर्य शास्त्रार्थियों ने पं० कालू राम जी द्वारा प्रयुक्त मिनट शब्द की ओर जनता का ध्यान खींचा। पं० शान्ति प्रकाश जी ने जनता से कहा कि पौराणिक विद्वान जो अपनी विद्या पर इतना अभिमान कर रहा था और संस्कृत में शास्त्रार्थ के लिए हठ कर रहा था अब शास्त्रार्थ के नियम भग करके अंग्रेजी का शब्द प्रयुक्त कर रहा है। श्रोताओं ने पौराणिक पण्डित श्री पराजय की घोषणा की। सकरतल

ध्वनि से वैदिक धर्म का गगन भेदी नाद गूञ्जा।

स्मरण रहे कि श्री पं० मनसाराम जी व पं० शान्तिप्रकाश जी के जन्म स्थान के क्षेत्र में जितने शास्त्रार्थ हुए इतने अन्यतर नहीं।

भटिण्डा शास्त्रार्थ

भटिण्डा शास्त्रार्थ की चर्चा पीछे की जा चुकी है। पौराणिकों ने अपने उत्सव में जब बार २ आर्यों को उत्तेजित किया तो महाशय मोहन लाल जी श्री पं० मनसाराम जी को लेकर सभा मन्डप में पहुंचे और समय मांगा।

पं० जी को देखते ही पौराणिकों का दम फूलने लगा।

पं० जी ने चार प्रश्न किये.

(१) पौराणिक ग्रंथों में मांस के विधान के बारे आपने पूछा कि यह पशु वध सनातन धर्म में आदि काल से ही है अथवा बाद की मिलावट है। आपने बालमीकि रामायण बाल काण्ड सर्ग १४ श्लोक ३२ से ३८ का पौराणिक पं० ज्वाला प्रसाद मुरादाबादी का भाष्य पढ़कर सुनाया।

(२) नाविक की पुत्री सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न व्यास जी का वर्ण पौराणिक मत के अनुसार क्या है ?

(३) पौराणिक मत के अनुसार सिख, जाट, स्वर्णकार व कायस्थ किस वर्ण में हैं ?

(४) पौराणिक मत के अनुसार दलित भाई इसाई मुसलमानों से अच्छे हैं व नहीं ? अच्छे हैं तो उनके साथ अच्छा व्यवहार क्यों नहीं किया जाता ?

पं० मनसाराम जी की युक्तियों का श्रोताओं पर प्रभाव पड़ता देखकर एक पौराणिक अधिकारी ने कहा कि पं० मनसाराम को कान से पकड़कर बाहर निकालो। निर्भीक मनसाराम तनिक न घबराय और कहा कि सच्चाई का आपके पास यही उत्तर है 'कान से पकड़ कर बाहर निकाल दो।' यह मैं जानता हूं परन्तु मैं आर्य हूं मुझे कोई भय नहीं है। श्रोता पं० मनसाराम जी को बहुत उत्सुकता से सुनते रहे। पौराणिकों को न चाहते हुए भी श्रोताओं के विवश करने पर पं० मनसाराम जी को बार २ समय देना पड़ा।
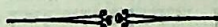
खोजता खण्डन खड़ग,
फिर आज मनसाराम को

श्री पं० मनसाराम जी पुराणों की अश्लील, सृष्टि नियम विरुद्ध गाथाओं पर बड़ा रोष प्रकट किया करते थे। वह कहा करते थे कि पुराणकारों ने हमारे इतिहास व संस्कृति को बिगाड़ा है। पुराणों की

अश्लील कहानियों के कारण हमारे महापुरुषों का विधर्मी उपहास उड़ाते हैं। वह कहा करते थे कि यह पुराण गाथायें वाम मार्ग की देन है। इनको छोड़ना ही पड़ेगा अन्यथा संसार हिन्दुओं का उपहास उड़ाता रहेगा ये पुराण पवित्र वैदिक धर्म के घाती हैं। आज दीनानगर आदि स्थानों पर नर बलि पर लोग रोष प्रकट कर रहे हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि दोषी कौन हैं? दोषी वे ग्रंथ व पंथ हैं जो इस दुर्भावना व मिथ्या विश्वास का स्रोत हैं। प्राचीन संस्कृति के नाम पर आज हम अनार्ष ग्रंथों के खण्डन से सुकचाते व घबराते हैं। कुछ दल भारत के प्राचीन अवैदिक ग्रंथों कीं बुराई की लीपापोती करते रहते हैं। उनको मृतक श्राद्ध में दान का बहाना, जल स्थल की तीर्थ यात्रा में स्वास्थ्य सुधार, व्रतों के नाम पर उपवास में शरीर लाभ, पेड़ पूजा में वैज्ञानिकता दीखती है। इस प्रकार पौराणिकता को जीवित रखने के लिए कुछ लोग नये २ तर्क खोजते रहते हैं। परन्तु इन नये २ मतों, अवतारों की बाढ़, पनपते पाखण्ड के लिए

खोजता खण्डन खड्ग फिर
आज मनसाराम को।

साहित्यकार के रूप में

धर्मवीर लेखराम के अन्तिम आदेशानुसार पं० मनसाराम जी ने वैदिक धर्म प्रचार में वाणी व लेखनी दोनो का प्रयोग किया। उनकी वक्तृत्व शक्ति की जहां धाक थी वहां उनकी लौह लेखनी का भी अद्भुत प्रभाव था। पहिले बताया जा चुका है कि ऋषि सन्देश सुनाने के लिए

सर्वप्रथम आपने लेखनी का ही आश्रय लिया था। आपने वैदिक धर्म के मण्डन व पौराणिक मत के खण्डन में अद्वितीय साहित्य पैदा किया। प्रत्येक निष्पक्ष समालोचक को मानना पड़ेगा कि इस क्षेत्र में कोई भी आज तक उनसे आगे नहीं निकल सका। इसमें दो मत नहीं हो सकते कि महर्षि दयानन्द के पश्चात् मायावाद का खण्डन करने में श्रीयुत पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने ठोस मौलिक दार्शनिक साहित्य दिया है और पौराणिक मत के खण्डन में श्री पं० मनसाराम जी की गवेषणा व साहित्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। खेद है कि आज राजनीति के चक्र में पड़े हुए ताली पिटवाने के रसिक तथा कथित आर्य समाजी नेताओं ने पं० मनसाराम जी के साहित्य के पुनः प्रकाशन का कभी विचार ही नहीं किया।

उनका सारा साहित्य आज अप्राप्य है। कुछ प्रमुख पुस्तकें :—

(१) 'पौराणिक पोल प्रकाश' यह ग्रंथ दो खण्डों में हिन्दी में लिखा गया था। लगभग १३५० पृष्ठों के इस ग्रंथ ने बड़ी धूम मचादी। इसमें बड़ी खोजपूर्ण सामग्री दी गई है। यह ग्रंथ लाहौर में दयानन्द उपदेशक विद्यालय गुरुदत्त भवन में बैठ कर लिखा गया था। पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज की आज्ञानुसार लिखा गया। इसकी सामग्री की खोज में स्वामी जी ने स्वयं भी बड़ा कार्य किया। स्वामी जी महाराज को ही यह ग्रंथ रत्न समर्पित किया गया। पं० मनसाराम जी श्री स्वामी जी महाराज को अपना गुरु समझते थे।

(२) 'पौराणिक पोप पर वैदिक तोप' उर्दू में १२२४ पृष्ठों का यह ग्रंथ टोहाना के महाशय देवी दयाल जी ने प्रकाशित करके अत्यन्त थोड़े मूल्य पर प्रसारित किया। इसका बड़ा प्रचार हुआ। पुराणों का वास्तविक स्वरूप देखना हो तो इसमें देखिए। आर्यसमाज पर किये गये

आक्षेपों का उत्तर भी इस में दिया गया है।

(३) 'चेतावनी प्रकाश' यह पुस्तक बड़ी रोचक है। यह भी उर्दू में ही मैंने पढ़ी है। सम्भवत: हिन्दी में भी छपी थी। ३०० पृष्ठों के लगभग यह पुस्तक महाशय जी के मित्र महाशय हंसराज आर्य बरेटा मण्डी ने लागत मात्र मूल्य पर प्रचारित की। इसमें भी वैदिक मन्तव्यों का मण्डन व पौराणिक मत का खण्डन किया गया है। इसके दो अध्याय 'फलत ज्योतिष मीमांसा' व 'आर्यसमाज क्या है ?' पृथक २ हिन्दी में महाशय हंसराज ट्रस्ट बरेटा ने पुन: प्रकाशित करवाए हैं।

(४) 'पौराणिक दम्भ पर वैदिक बम्ब' यह हिन्दी पुस्तक भी पं० जी की ही लिखी हुई थी। इस पुस्तक में पौराणिक पं० शम्भुदयाल त्रिशूल लायलपुर निवासी, पं० माधवाचार्य कौल वाले की एक २ व पं० गोपाल मिश्र हरियाना जिला होश्यारपुर की तीन अत्यन्त अश्लील पुस्तकों का उत्तर दिया गया था। विरोधियों की इन पांच पुस्तकों में आर्यसमाज व महर्षि दयानन्द के सम्बंध में ऐसे अभद्र शब्दों का प्रयोग किया गया था जिन को सुनकर पढ़कर बड़े २ निर्लज्ज भी लज्जित हो जाएं।

पं० जी ने भी ऐसा मुंह तोड़ उत्तर दिया कि पौराणिकों में ऐसी खलबली मची जो आज पर्यन्त उन्हें भुलाए नहीं भूल सकती।

(५) शिव पुराण आलोचना (हिन्दी)। (६) भविष्य पुराण आलोचना यह पुस्तक श्री दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर की ओर से तैयार करवाई गई। शास्त्रार्थों के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई (हिन्दी)। (७) रावणे जोगी के वेश में (उर्दू) १९२५ ई० में भटिण्डा से प्रकाशित हुआ। (८) मेरे पच्चीस मिनट (भिवानी शास्त्रार्थ) हिन्दी में।

(६) **ब्रह्मवैवर्त्त पुराण** :—श्री पं० जगत कुमार जी शास्त्री ने अभी अपने एक लेख में लिखा है कि श्री पं० जी ने ब्रह्मवैवर्त्त पुराण की भी विस्तृत आलोचना लिखी थी। श्री शास्त्री जी ने पं० जी के आदेशानुसार पुस्तक की पाण्डुलिपि थानेसर से डाक पार्सल द्वारा लाहौर भेजी परन्तु पुस्तक की प्रकाशित प्रति कहीं देखने में नहीं आई। कहां गई ? कुछ पता नहो।

पं० जी के सुपुत्र श्री सत्यपाल से उनकी बहुत सी प्रकाशित अप्रकाशित सामग्री श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार भी ले गये। वह सारा ज्ञान–भण्डार कहां नष्ट हुआ ? इस का भी कुछ अता पता नहीं।

इसके अतिरिक्त भी पं० जी ने बहुत कुछ लिखा था। उनके साहित्य की विशेषता यह थी कि वह ऐसी रोचक भाषा में लिखते थे जिसे जन साधारण भी पढ़ व समझ सकते थे। ऐसा खोजपूर्ण लिखते थे। कि विद्वान भी उनके साहित्य को पढ़ना आवश्यक समझते थे। गम्भीर विषय को सरल शैली में व्यक्त करने की कला के वह आचार्य थी। बड़ी गूढ़ दार्शनिक बातों को वह जन साधारण के गले के नीच उतार देते थे।

*पं० जी के साहित्य पर दो सम्मतियाँ

वेद-शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने पौराणिक पोल प्रकाश के विषय में लिखा था :—

"यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी और प्रत्येक विषय पर जो प्रश्न होते हैं, उनका उत्तर सप्रमाण और युक्ति युक्त है। जिसके लिये पं० मनसाराम जी बधाई के पात्र हैं। यह पुस्तक प्रत्येक आर्यसमाज में होनी चाहिए और प्रत्येक उपदेशक को अपने पास रखनी चाहिए।"

प्रसिद्ध लेखक श्री पं० जगत कुमार जी शास्त्री ने लिखा है :—

"श्री पं० मनसाराम जी की साहित्य सेवा अधिक महत्त्वपूर्ण और उपयोगी होने के साथ ही बहुत बड़े विस्तार वाली भी है। माना कि उनकी पुस्तकों की नाम गणना अधिक नहीं है. परन्तु उनकी पृष्ट संख्या इतनी अधिक है कि श्री पं० जी की गणना सहज में ही बहुत अधिक साहित्य रचना करने वाले धर्मवीर श्री पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर, वीतराग श्री स्वामी दर्शनानन्द जी, अमर हुतात्मा श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी और महान तत्त्वज्ञानी श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय प्रभृति की श्रेणी में सहज में ही सम्मिलित की जा सकती है।"

* आर्य मर्यादा साप्ताहिक २५ वैसाख सं० २०२९ के अंक में श्री पं० जगत कुमार शास्त्री जी के लेख से साभार उद्धृत।

पं० मनसाराम जी वैदिक तोप

लौह लेखनी चलाई, धूम धर्म की मचाई।
ज्योति वेद की जगाई, सत्य कीर्ति कमाई ।।
तेरे सामने जो आए, मतवादी घबराए।
कीनी पोप से लड़ाई ध्वजा वेद की झुलाई ।।

वैदिक तोप नाम पाया,
दुर्ग ढोंग का गिराया।
तान वेद की सुनाई,
विजय दुन्दभि बजाई ।।

रूढ़ीवाद को लताड़ा, मिथ्या मतों को पछाड़ा।
कांपे अष्टादश पुराण, पोल खोल कर दिखाई ।।
लेखराम के समान, ज्ञानी गुणी मतिमान।
जान जोखिम में डाल, धर्म भावना जगाई ।।

जिसकी वाणी में विराजे,
युक्ति तर्क व प्रमाण।
धाक ऋषि की जमाई,
फैली वेद कीं सच्चाई ।।

मनसाराम जी बेजोड़, कष्ट सहे कई कठोर।
धुन देश की समाई, लड़ी गोरे से लड़ाई ।।

बड़ा साहसी सुधीर,
मनसाराम प्राणवीर।
सफल हुआ जन्म जीवन.
तार गई तरुणाई ।।

धर्म धोंकनी चलाई, राख तम की हटाई।
जीवन समिधा बनाके, ज्ञानाग्नि जलाई ।।

रचयिता :— प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

जीवन की कुछ झांकियां

होटल में आतिथ्य वाला समाज

श्री पं० स्वरूप सिंह जी भटिण्डा ने बताया कि एक बार पं० मनसाराम जी रात्रि बहुत देर से भटिण्डा पधारे। सेवक ने कहा, 'पं० जी भोजन करेंगे ?" पं० जी ने कहा, "हां भाई भूख तो लगी है।" सेवक ने कहा, "मैं होटल से भोजन लाता हूं। किसी के घर से तो इस समय मिलेगा नहीं।"

पं० जी ने कहा कि होटल से मत लाएं। हम ऐसे समाज में नहीं रहते जहां होटल में भोजन करना पड़े। पं० जी यह कहकर चल दिये और पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के विख्यात शिष्य श्री अजीत सिंह 'किरती' के घर चले गये। किरती जी ने कहा, "पं० जी इस समय दो रोटियां तो पड़ी हैं। कोई दाल भाजी नहीं। मैं पत्नी को कहता हूं अभी भोजन बना देगी।"

पं० जी ने कहा, 'नहीं उसे कष्ट मत दें जो है मैं वही खालूंगा।'

यह ज्ञात नहीं कि भटिण्डा समाज में आतिथ्य दान व प्रचार की भावना क्यों नहीं।

—○○※○○—

पौराणिक भाग गया

श्री स्वरूप सिंह ने ही बताया कि एक बार भटिण्डा में फाज़िल्का वाली धर्मशाला में एक पौराणिक पोप ने ऋषि दयानन्द को कलयुगी ब्रह्मचारी आदि कहकर उपहास उड़ाया। एक आर्य ने वहीं उठकर शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। तत्क्षण तार देकर पं० जी को बुलाया गया। उनके आगमन की सूचना पाकर पोप जी भाग गये।

दानशीलता:- पूज्यपाद श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज ने बताया कि श्री पं० मनसाराम जी में तनिक भी लोभ न था। वह संस्कारों पर प्राप्त होने वाली अपनी दक्षिणा भी परोपकार के कार्यों में लगा देते थे। एक बार उनके पास दक्षिणा के रूप में प्राप्त बहुत सा धन इकट्ठा हो गया। उन्होंने यह सारा धन पूज्यपाद श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज को उपदेशक विद्यालय में अपनी पत्नी की स्मृति में यज्ञशाला के निर्माणार्थ भेंट कर दिया। इसी प्रकार अफ़्रीका के यशस्वी आर्योपदेशक श्री पं० सत्यपाल जी ने भी इस यज्ञशाला के लिए अपनी दक्षिणा का धन भेंट कर दिया।

कितना ऊंचा त्याग है यह!

कौन रोकता है ? तलवंडी साबो में आर्य समाज का उत्सव रखा गया। पटियाला रियासत के अधिकारियों ने इस उत्सव पर प्रतिबंध लगा दिया। यह समाचार रामां मण्डी पहुंचा। उस समय श्री

पं० जी वहीं थे। आपने कहा, "उत्सव करेंगे। मैं जाकर आर्यसमाज का जलसा करूंगा, देखता हूं कौन रोकता है ?" निडरता का पुतला मनसाराम वहाँ गया। सरकारी अधिकारी देखते ही रह गये। रियासती तानाशाही का मान मर्दन करते हुए मनस्वी मनसाराम जी ने डट कर आर्यसमाज का उत्सव किया।

स्वाध्या .शीलता :—श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती ने बताया कि एक बार पं० जी उन के पास नरेला पधारे। तीन चार दिन वहाँ ठहरे। प्रातः से सायंकाल तक वह वेद के स्वाध्याय में ही रत रहे। "उनकी स्वाध्यायशीलता की यह घटना मैं आज पर्यन्त नहीं भूल सका।"

आतिथ्य —श्री पं० जी का आर्य जगत में बड़ा व्यापक परिचय था। उनके घर पर अतिथि आते ही रहते थे। उपदेशकों की आर्थिक स्थिति सब जानते ही हैं। श्री अजीत सिंह जी किरती तो विनोद से कहा भी करते थे कि पं० जी आप एक 'फुल्का फण्ड' खोलें। उससे अतिथियों की सेवा का कार्य ठीक रूप से चलेगा।

प्रमाण की प्रामाणिकता :—आर्य प्रोदशिक सभा के भजनीक श्री पं० नथुराम जी ने बताया कि एक बार कैथल में एक सभा में बोलते हुए पं० जी ने महाभारत का कोई प्रमाण दिया। एक पौराणिक बीच में से बोल पड़ा कि महाभारत में ऐसा नहीं लिखा। पं० जी ने वहीं व्याख्यान बन्द करते हुए कहा कि रात्रि तुम महाभारत का अपना ग्रंथ लाकर दिखाओं। इस प्रमाण की प्रामाणिकता का निर्णय पहले होगा फिर व्याख्यान दूंगा।

रात्रि वह व्यक्ति महाभारत ले आया। उसने दिन में अपनी कही बाती क पड़ताल ही न की। पं० जी ने भरी सभा में कहा, "कहां है

वह महाभारत वाला ?" वह आगे आया ? उसे वह प्रकरण पढ़ने को कहा गया। जो कुछ पं० मनसाराम जी ने दिन में कहा था वही कुछ पुस्तक में था। भरी सभा में पराजित होकर विरोधी को भागते ही बन पड़ी।
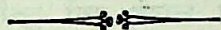
पं० जी का अद्भुत तर्क

पुरुषों को गर्भ :—पं० जी विरोधियों को शास्त्रार्थ समर में चित्त करने में बड़े कुशल खिलाड़ी थे। पौराणिक विद्वानों ने आर्याभिविनय के एक प्रार्थना मन्त्र का भद्दे ढंग से उपहास उड़ाया। मन्त्र के भाष्य में ऋषि ने लिखा है, "हे ईश्वर .... हमारे गर्भ मत गिरा।" इस प्रार्थना मन्त्र का भाव तो स्पष्ट ही है कि यह स्त्री व पुरुष दोनों के लिए प्रार्थना है। एक पौराणिक पंडित ने कहा "क्या आर्य समाजी पुरुषों को भी गर्भ होता है ?"

श्री पं० मनसाराम जी ने मुंह तोड़ उत्तर देते हुए लिखा कि यदि कोई कहे कि "मिश्र जी के लड़का होने वाला है तो क्या इसका भी यही अर्थ होगा कि मिश्र जी को गर्भ हुआ है?" इस के साथ ही पं० जी ने भगवत पुराण का प्रमाण दे कर सिद्ध कर दिया कि पुराणों के अनुसार पुरुषों का गर्भित होना भी असम्भव नहीं।

मेरा पार्सल :—संगरूर शास्त्रार्थ में मृतक श्राद्ध पर बोलते हुए पं० जी ने कहा कि मैं भी तो कहीं से इस जन्म में आया हूं। मृतकों को यदि श्राद्ध का माल पहुंचता है तो मुझे क्यों नहीं मिलता ? किसी पौराणिक को भी कभी पिछले जन्म के सम्बंधियों द्वारा भेजा

श्राद्ध का माल पहुंचा नहीं देखा। यदि श्राद्धों का माल मृतक पितरों तक पहुंचना सम्भव है तो मेरा पार्सल कहाँ जाता है ?

सनातन धर्म की लुटिया :—चोटी सम्बंधी विवाद छेड़ कर पौराणिक आर्य समाज से उलझते रहे हैं। श्री पं० मनसाराम जी ने कहा यदि चोटी रखने से ही कोई हिन्दु बनता है तो बिना शिखा के सिख व स्त्रियां हिन्दु कैसे हो सकती हैं ?

पौराणिक पंडितों ने कहा कि जटा जूट सिर पर बाल रखने के कारण वे बिना शिखा के ही हिन्दुओं में समझे जाएंगे।

इस पर पंडित जी ने लिखा फिर तो तुम्हारे सनातन धर्म की लुटिया ही समुद्र में डूबेगी। इस प्रकार तो ईसाई व मुसलमान आदि सब स्त्रियाँ हिन्दुओं में ही सम्मिलित होंगी।

पोप की परिभाषा :—एक बार एक पोप ने कहा कि आप हमें पोप कहते हैं। पोप का अर्थ बड़ा व बाप है अतः हम आर्य समाजियों के बाप हैं। पं० मनसाराम जी ने कहा बाप तो बाप कहला कर नहीं चिड़ता। आप तो ऐसे चिढ़ते हैं जैसे साला शब्द से कोई चिढ़ता है।

दो श्रद्धाञ्जलियां

"श्री पं० मनसाराम जी सभा के महोपदेशक थे। शास्त्रार्थों के जगत में उन्होंने पौराणिकों के छक्के छुड़ा दिये थे। पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के और मेरे अधिष्ठातृ काल में उन्हे बहुत लम्बे २ उत्सवों के पुरोगम दिये जाते रहे। उत्सवों के दिनों में उनके मार्ग व्यय बिल एक २ सौ से ऊपर बढ़ जाते थे। उनके शास्त्रार्थों तथा उनकी पुस्तकों की ऐसी धाक जमी कि पौराणिक मण्डली काँप उठी। पठान हरि सिंह नलवा के नाम से बच्चों को डराते थे तो पौराणिकों की आत्मा पं० जी के नाम से थरथर कांपती थी।

उनका अन्तिम पुरोगम आर्य कुमार सभा दाजल ज़िला डेरा गाजी खां का था। जब मैं वहाँ पहुंचा तो पं० जी बहुत कष्ट में थे। गरदन सीधी न हो सकती थी। उठना बैठना कठिन था। सो भी न सकते थे। उन्हे कारबंकल फोड़ा था। मैंने उनको बहुत प्रार्थना की कि वह मेरे ग्राम कोट छुटा चलें वहाँ पूरा इलाज और सेवा होगी। वह एक न माने। वह लुधियाना लाए गये आर्य हस्पताल में उनके फोड़े का ओपरेशन हुआ जो सफल रहा किन्तु निर्बलता के कारण उनकी पवित्र, सरल, परिष्कृत, उदार आत्मा नश्वर शरीर को छोड़ गई।

उनके साथ गहरी मित्रता, अगाध श्रद्धा के कारण आज दिन तक उनकी याद कर्त्तव्य निष्ठा का निर्देश करती है।"

श्री पं० शान्ति प्रकाश जी

शास्त्रार्थ महारथी

"१९४१ ई० में पं० जी ने देश की स्वाधीनता में सक्रिय हो कर पुनः जेल जाने का निश्चय किया। १९२२ ई० में हिसार के अंग्रेज डी० सी० ने उनकी पैतृक सम्पत्ति को सरकारी अधिकार में ले लिया। उन्होंने पहले इस क्षेत्र में अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन चलाया। हमारा बहिष्कार किया गया।"

म० कुन्दनलाल बडलाढा

लेखक की अन्य पुस्तकों पर सुप्रसिद्ध विद्वानों व पत्रों की कुछ सम्मतियां

वीर सन्यासी (जीवन चरित्र श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज)

श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय

'स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की जीवनी तो तुम्हारी अद्भूत कृति है जिसने पढ़ी प्रशंसा की हैं। आशा की जाती है कि अन्य ऐसे ही ग्रन्थ देखने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

श्री पं० शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी, गुड़गांव

'इस अमर गाथा को आपने अपनी लौह लेखनी से लिखा है। आपकी लेखन शक्ति को मैं बारम्बार प्रणाम करता हूं।'

डा० भवानी लाल जी भारतीय एम.ए.पी एच.डी.

आपने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के विषय में लेखनी उठाकर एक बड़े अभाव की पूर्ति की है।

प्रो० चन्द्रप्रकाश जी आर्य मासिक विश्वज्योति में

'लेखक बधाई एवं धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने साहित्य को अमूल्य निधि प्रदान की है। भावों को अत्यन्त रोचक एवं सुसम्बन्ध ढंग से उपनिबद्ध किया गया है।

हृदय-तन्त्री (गीत संग्रह) ;-

डा० भवानी लाल भारतीय

ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति समन्वित इस संग्रह के कई गीत निश्चय ही लोक प्रियता प्राप्त करेंगे। यह हमारी दृढ़ धारणा है।

मौलिक भेद (हिन्दी व अंग्रेजी)

पूज्य स्वामी सत्य प्रकाश जी

(पूर्व डा० सत्य प्रकाश जी (D. Sc; F.N.I,)

प्रो० श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' लब्ध प्रतिष्ठ लेखक हैं, और उनकी लेखनी से लिखी गयी 'मौलिक भेद' पुस्तक आर्यसमाज के दार्शनिक दृष्टि-कोण को स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करने में अनूठी है। ईश्वर को मानने वाले अनेक वाद हैं, स्तुति प्रार्थना उपासना इनके प्रति भी बहुतों की निष्ठा है।

सुख दुःख पाप पुण्य, स्वर्ग नरक, ये भी साहित्य के पुराने परिचित शब्द हैं किन्तु महर्षि दयानन्द के साहित्य में इन शब्दों द्वारा जिन दार्शनिक सिद्धान्तों की अभिव्यक्ति हुई है, उनका स्रोत प्राचीनतम होते हुए भी नवीनतम है; और बुद्धिवादी युग में इस अभिव्यक्ति को लेकर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। आप इस पुस्तक को पढ़ें, और आपकी समझ में आ जावेगा कि महर्षि के सिद्धान्तों में कितनी गम्भीरता है, और दूसरों की मान्यताओं से इसमें कितना वैभिन्य। महर्षि का दृष्टिकोण आपको नवीन प्रतीत होगा किन्तु, यह भी एक परम सत्य है कि यही हमारा प्राचीनतम दृष्टिकोण है।

प्रि० रामचन्द्र जी जावेद

'यद्यपि पांचों विषय अत्यन्त गूढ और दार्शनिक हैं परन्तु श्री 'जिज्ञासु' जी ने आर्य विद्वानों और आर्य ग्रन्थों के प्रमाणों से इन्हे ऐसा युक्ति सम्मत रूप दे दिया है कि वे सरल, सुबोध और रोचक बनकर सबके लिए सरस बन गये हैं।'

कविराज हरनाम दास जी बी० ए०

'आपके पुरुषार्थ से आर्यसमाज अपने को धन्य मानता है।'

पूज्य उपाध्याय जी के सुशिष्य
श्री पं० राधे मोहन जी प्रयाग

'मौलिक भेद' में वैदिक एव अवैदिक सिद्धान्तों की युक्ति युक्त मर्म स्पर्शी व हृदयग्राही समालोचना की गई है। तुलनात्मक विवेचन की शैली रोचक तथा ज्ञान वर्द्धक है।

वेदज्ञ पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड ज्वालापुर

'मौलिक भेद' में आपने मत मतान्तरों से वैदिक धर्म का जो भेद दिखाया है वह आपके गम्भीर अध्ययन और मनन को सूचित करता हैं जिसे देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

श्री स्वामी विद्यानन्द विदेह के मासिक सविता की सम्मति

'पुस्तिका तर्क-प्रमाण पुरस्सर, प्रखर एवं ओजस्वी मस्तिष्क से प्रसूत तथा मननीय है।'

(मुद्रक:- जनता प्रैस भटिण्डा)